Sem. 5, MJ-9

हिन्दी समीक्षा : उद्भव और विकास

समीक्षा या आलोचना सर्जनात्मक साहित्य के साथ चलनेवाली प्रक्रिया का नाम है। यह प्रक्रिया साहित्य के गुणावगुण का उद्घाटन कर उसका मूल्यांकन करने की है। यह साहित्य को गति प्रदान कर उसे प्रशस्त मार्ग पर बढ़ने में सहायक होती है। आ० गुलाबराय कहते हैं, "आलोचना का मूल उद्देश्य कवि की कृति का सभी दृष्टिकोणों से आस्वाद कर पाठकों को उस प्रकार के आस्वाद में सहायता देना तथा उनकी रुचि को परिमार्जित करना एवं साहित्य की गति निर्धारित करने में योग देना है।"

आलोचना साहित्य के सृजनात्मक साहित्य के साथ-साथ अस्तित्ववान है। "बालचन्द बिज्जावइ भाषा। दुहु नहिं लग्गइ दुज्जन हासा।" कहकर विद्यापति ने अपने साहित्य की ही समीक्षा की थी। हमारे यहाँ प्राचीनकाल से ही साहित्य-समीक्षा की अनेक पद्धतियाँ विकसित हो गयीं। इन पद्धतियों में आचार्य पद्धति, टीका पद्धति, शास्त्रार्थ-पद्धति, सूक्ति पद्धति, खण्डन पद्धति, लोचन पद्धति प्रमुख थीं। रीतिकालीन साहित्य का एक बड़ा भाग लक्षण-ग्रंथों का है, जो सैद्धान्तिक समीक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहे थे। किन्तु व्यावहारिक आलोचना को प्रशस्त करने एवं समीक्षा के नये पाश्चिमी तत्वों का प्रवेश करने में भारतेन्दु-युग का महत्व है। इस समय 'हरिश्चंद्र मैगजीन', 'ब्राह्मण' जैसे पत्रों में भारतेन्दु एवं उनके समकालीनों ने पुस्तकों पर टिप्पणियाँ लिखीं। आगे चलकर द्विवेदी-युग में 'सरस्वती' एवं 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' ने आलोचना की प्रगति में यथेष्ट योग दिया। आ० महावीर प्र० द्विवेदी, मिश्रबंधु, पं० पद्मसिंह शर्मा आदि समीक्षकों ने अपने लेखों द्वारा आलोचना-साहित्य को नयी दिशा दी। इस समय बाबू श्यामसुन्दर दास की 'साहित्यालोचन' पुस्तक ने हिन्दी-समीक्षा एक मार्ग दिखाया जहाँ भारतीय एवं पाश्चात्य सिद्धान्तों का एक समन्वय प्रस्तुत किया गया।

इसी समय हिन्दी समीक्षा के क्षेत्र में आ० शुक्ल का आगमन एक युगांतरकारी घटना के रूप में दिखता है। सूर, तुलसी, जायसी पर उनकी व्यावहारिक आलोचना, हिन्दी साहित्य का इतिहास के रूप में या रस-मीमांसा जैसी समीक्षा-पुस्तकों के द्वारा वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित समीक्षा का मार्ग प्रशस्त हुआ।

उनकी समीक्षा के तीन प्रमुख पहलू हैं - ऐतिहासिक और समाजशास्त्री, विश्लेषणात्मक और आदर्शवादी। छायावादी-युग में शुक्लजी की परम्परा आगे बढ़ती है और आ० नन्ददुलारे वाजपेयी एवं डॉ० नगेन्द्र जैसे आलोचकों ने कलात्मक सौष्ठव और शक्ति को आँकने की दिशा दी। इसके बाद हिन्दी समीक्षा प्रगतिवादी समीक्षा के क्षेत्र में प्रवेश करती है। प्रगतिवादी समीक्षा ने साहित्य की समाजशास्त्रीय समीक्षा की है, जिसके उन्नायकों में शिवदानसिंह चौहान, रामविलास शर्मा, नामवर सिंह आदि प्रमुख हैं। यह प्रगतिवादी समीक्षा छायावादी समीक्षा के अन्तर्मुखी स्वरूप के विरुद्ध बहिर्मुखी काव्य-चेतना पर जोर देती है। प्रगतिवादी या मार्क्सवादी समीक्षा-पद्धति के साथ ही छायावादी चेतना के विरुद्ध एक अन्य प्रवृत्ति सामने आती है। यह प्रवृत्ति रोमांटिसिज्म-विरोधी अभियान के पुरोधा टी० एस० इलियट की प्रेरणा से अज्ञेय जैसे नयी कविता के कवियों द्वारा प्रतिष्ठित हुई। इस नयी समीक्षा में कविता के कथ्य को केन्द्र में रखकर सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य को पूरा महत्त्व मिला, रचनाकार की मौलिक प्रतिभा और सर्जनात्मकता का यथोचित मूल्यांकन हुआ। हिन्दी समीक्षा का पूरा इतिहास विभिन्न सिद्धान्तों और वादों की राह से गुजरता हुआ साहित्य-सृजन को दिशा देने और उसका मूल्यांकन करने का है। इस यात्रा में हिन्दी समीक्षा निम्नलिखित विभिन्न वादों-सिद्धान्तों के मध्य प्रगतिशील रही है।—

(1) ऐतिहासिक समीक्षा — साहित्य का ऐतिहासिक दृष्टिकोण से परंपरागत विवरण प्रस्तुत करना ही इसकी प्रवृत्ति है। प्रमुख समीक्षकों में आ० शुक्ल, आ० हजारीप्रसाद द्विवेदी आदि हैं।

(2) सुधापरक समीक्षा — यहाँ कृति के गुण-दोष की विवेचना के साथ ही समीक्षक रचनाकार को सुझाव भी देता है। आ० महावीर प्र० द्विवेदी ऐसे ही समीक्षक हैं।

(3) तुलनात्मक समीक्षा — जहाँ कृति में निहित तत्त्वों की तुलना अन्य कृति में निहित तत्त्वों से की जाती है। ऐसे समीक्षकों में पद्मसिंह शर्मा, कृष्णबिहारी मिश्र आदि प्रमुख है - इन्होंने देव और बिहारी की तुलना की तथा मूल्यांकन किया।

(4) शास्त्रीय समीक्षा — इस पद्धति में काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों के आधार पर किसी कृति की समीक्षा होती है। ऐसे समीक्षकों बाबू श्याम सुन्दर प्रसाद, गुलाब राय, आ० शुक्ल, विश्वनाथ प्र० मिश्र आदि प्रमुख हैं।

(5) स्वच्छंदतावादी समीक्षा — इस पद्धति ने छायावादी काव्य-धारा को

प्रतिष्ठित करते हुए वैयक्तिकता, लाक्षणिकता जैसे तत्वों को महत्व दिया। छायावाद के चार प्रमुख उन्नायकों - प्रसाद, पंत, निराला एवं महादेवी के साथ गंगा प्रसाद पाण्डेय, डॉ० नगेन्द्र जैसे समीक्षकों ने इस विचारधारा को पुष्ट किया।

(6) प्रगतिवादी समीक्षा — इस पद्धति ने साहित्य में उन प्रवृत्तियों को प्रतिष्ठित किया, जो कार्लमार्क्स के समाजवादी सिद्धान्त से प्रेरित हैं; अर्थात सर्वहारा वर्ग की वाणी को मुखर करनेवाली रचना ही यहाँ श्रेष्ठ मानी जाती है। ऐसे समीक्षकों में राहुल सांकृत्यायन, प्रकाश चन्द्र गुप्त, रामविलास शर्मा, शिवदान सिंह चौहान, मन्मथनाथ गुप्त, नामवर सिंह आदि हैं।

(7) व्यक्तिवादी समीक्षा — यह पद्धति सामाजिकता की विरोधिनी न होते हुए साहित्य में युगानुकूल प्रयोगों का समर्थन करती है। सामाजिक यथार्थ से इतर अनुभूति के प्रकार महत्वपूर्ण नहीं बल्कि अनुभूति की सत्यता और व्यापकता महत्वपूर्ण होती है। इस समीक्षा के उन्नायकों में अज्ञेय, भारती, लक्ष्मीकान्त वर्मा आदि प्रमुख हैं।

(8) मनोविश्लेषणात्मक समीक्षा — यह पद्धति फ्रायड के मनोविश्लेषण के सिद्धान्तों के अनुरूप कृति का विश्लेषण करती है। यहाँ अतृप्त एवं दमित वासनाओं को अनुभूतियों की जन्मदात्री माना जाता है। जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, नगेन्द्र आदि समीक्षकों ने इस पद्धति को पुष्ट किया।

(9) शोधपरक समीक्षा — विभिन्न विश्वविद्यालयों में शोध-कार्यों में यह समीक्षा-पद्धति दृष्टिगत है। यहाँ प्राचीन साहित्य की खोज और मूल्यांकन के साथ ही साहित्य की विविध प्रवृत्तियों का निदर्शन कराया जाता है।

(10) व्याख्यात्मक समीक्षा — इसका आधार शास्त्रीय सिद्धान्त होते हैं किन्तु नवीन तत्वों का भी समावेश होता है। यहाँ रचना के अनुरूप दृष्टि निर्धारित होती है। प्रभाकर माचवे जैसे समीक्षकों ने इसे बढ़ाया।

(11) समन्वयात्मक समीक्षा — भारतीय एवं पाश्चात्य समीक्षा-सिद्धान्तों के बीच समन्वय करते हुए यहाँ साहित्य के मूल्यांकन में व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया। प्रायः सभी बड़े समीक्षकों ने इस समन्वय दृष्टि को स्वीकारा है। नन्ददुलारे वाजपेयी, डॉ० नगेन्द्र जैसे बड़े समीक्षक इसी दृष्टि के समर्थक हैं।

स्पष्टतः हिन्दी समीक्षा निरन्तर प्रगतिशील है और यह निबंध, नाटक, कहानी, उपन्यास आदि अनेक विधाओं का मूल्यांकन एवं मार्गदर्शन कर रही है। आज हिन्दी समीक्षा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से नवीन प्रयोगों की स्थापना कर आलोचना-शास्त्र को समृद्ध एवं स्वतंत्र दिशा प्रदान कर रही है।